वार्षिक सदस्यता शुल्क - रु. २५/-

December-2024

# स्वानुभूतिप्रकाश

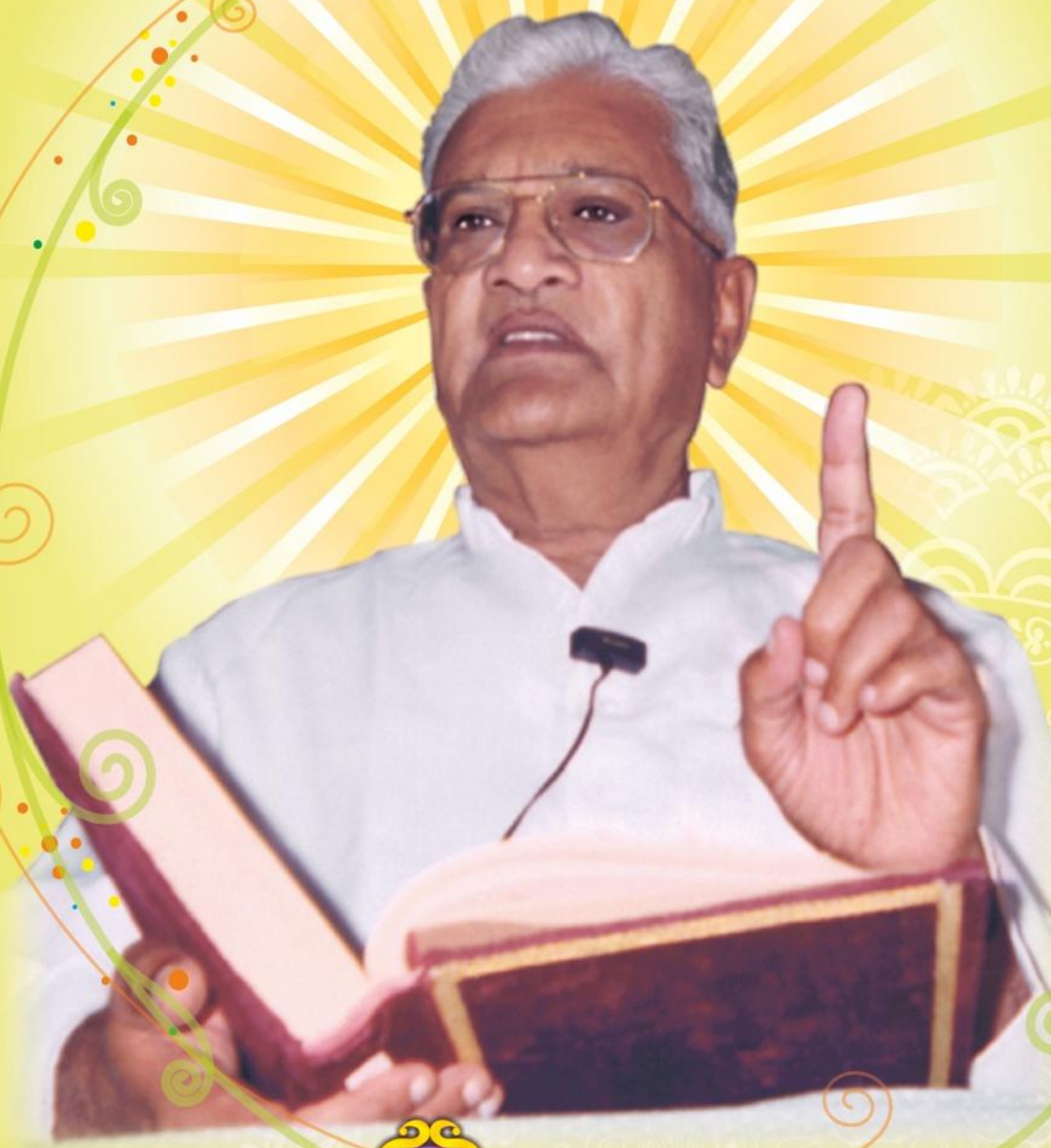

प्रकाशक :
श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट
भावनगर - ३६४ ००१.

# धन्य आराधक!!

सर्व ज्ञानीपुरुषोंके वचनोंका समन्वय करके उनके ज्ञानीपनेको समझानेवाले, वर्तमान समाजको अति उपकारी ऐसे स्वानुभवविभूषित पूज्य भाईश्री शशीभाईको उनके ९२वें जन्मजयंतीके (मार्गशीर्ष सुदि अष्टमी) अवसर पर उनके चरणोंमें स्वानुभूतिप्रकाश परिवारके भक्तिपूर्ण शत-शत वंदन

# स्वानुभूतिप्रकाश

वीर संवत्-२५५१, अंक-३२४, वर्ष-२६, दिसम्बर-२०२४

इस बातको समझनेके लिये अनन्त पुरुषार्थ चाहिए, बहुत अंतर-पात्रता चाहिए, सर्व पदार्थोंकी सुख-बुद्धि उड़ जानी चाहिए । इस प्रकारकी उत्कृष्ट पात्रता चाहिए । इसकी पर्यायमें प्रबल योग्यता चाहिए। श्रीमद् राजचंद्रजी कहते हैं कि ''तूं तेरे दोषसे दुःखी हो रहा है, तेरा दोष इतना ही है कि परको अपना मानना व अपनेको भूल जाना ।'' २२९

*

सत्-प्राप्तिके लिए यदि सारी दुनिया बिक जाए, पूरा जगत चला जाए तो भी आत्माको न गँवाया जाए । २३४

*

भगवानकी मूर्तिके जैसे ही भगवानके आगमका बहुमान होना चाहिए । आगम तो मुनियोंका अक्षर-देह है । २३५

## पूज्य गुरुदेवश्रीके 'परमागमसार'में से कुछएक चयन किये हुए वचनामृत

*

समझके द्वारा ज्ञानमें जैसे-जैसे भाव-भासन विकसित होता जाता है, वैसे-वैसे ज्ञानकी सामर्थ्य बढ़ती जाती है और ऐसी बढ़ती हुई ज्ञान सामर्थ्य द्वारा मोह शिथिल होता जाता है । ज्ञान जब सम्यक् रूपसे परिणमित होता है तब मोहसमूह नाशको प्राप्त होता है । अतः ज्ञानसे ही आत्माकी सिद्धि है, ज्ञानके अतिरिक्त आत्मसिद्धिका अन्य कोई साधन नहीं है । २३६

*

जिसकी महिमा की होगी, उसकी महिमा मृत्युके समय भी नहीं छूटेगी । राग-द्वेष और संयोगकी कीमत की होगी तो वह नहीं छूटेगी । आत्माकी महिमा की होगी तो नहीं छूटेगी, जो कीमती लगा होगा - उसकी कीमत नहीं छूटेगी । २३८

*

(इस जीवन कालमें) धन उपार्जनकी वृति तो आत्मघात ही है । वास्तवमें यह तो आत्मलाभका अवसर है - आत्माके आनन्दकी कमाईका अवसर है , इसे न चूके । २४०

*

जिसने जीवनकालमें संयोगके साथ ही भावी वियोगको चाहा है, अनुकूलतामें भी जिसको उसके वियोगकी भावना है, उसको उनके वियोगके समय खेद नहीं होता । २४२

*

देह तो तुझे छोडेगी ही, पर तूँ देहको (दृष्टिमें) छोड़े तो तेरी बलिहारी है - यह तो शूरवीरोंका खेल है । २४३

*

एक बार अन्तरदृष्टिसे प्रतीति कर कि मैं सिद्ध समान अशरीरी हूँ, शरीरका स्पर्श ही नहीं करता, अभी ही शरीरके मुक्त हूँ - ऐसी श्रद्धा न करनेसे देह छूटनेके समय शरीरके प्रति तेरी (एकत्व) लालसा तीव्रतर होती जायेगी । २४७

*

भाई! संयोगोंका त्याग हुआ उससे तेरी पर्यायमें क्या अन्तर पड़ा? जब बाहरके हीनाधिक संयोगोंका लक्ष्य छूट जाए, कषायकी मन्दता या तीव्रताका भी लक्ष्य छूट जाए और तेरी पर्याय चैतन्य वस्तुको लक्ष्य कर तद्रूप परिणमित हो तभी मिथ्यात्वका त्याग होता है - यही यथार्थ त्याग है। २४८

*

पुण्य-पुण्य करके अज्ञानी पुण्यकी मिठासका आस्वादन करता है परन्तु पुण्यकी मिठास तो उसका खून करती है । मिथ्यात्व-भाव तो कसाईखाना है । मिथ्यात्वका पाप सात व्यसनसे भी अनन्तगुणा (भयंकर) है, उसका पोषण करनेवाला तो कसाईखाने खोलते हैं । २५०

*

सन्त कहते हैं कि हम हमारे स्वघरमें आए हैं । अब हम अनुकूलताके बर्फमें गलनेवाले नहीं और प्रतिकूलताकी अग्निमें जलनेवाले नहीं । हमारा ज्ञान-विलास प्रकट हुआ है, उसमें हम सोये सो सोये । अब हमें उठानेमें कोई भी समर्थ नहीं है । २९६

*

'समयसार' - अर्थात् सर्वज्ञकी दिव्य ध्वनिका वर्तमान पूर्णरूप । बारह अंग और चौदह पूर्वका दोहन ही 'समयसार' है और सम्पूर्ण समयसारका दोहन ४७ शक्तियाँ हैं। (आचार्य देवने) शक्तियोंका वर्णन करके आत्माके परमात्म-स्वरूपको उजागर कर दिया है । इन शक्तियोंके वर्णनमें तो केवलीका हार्द है । 'समयसार' तो भरतक्षेत्रका अद्वितीय शास्त्र है । २९८

*

अहो ! सम्यग्दृष्टि जीवको छः छः खंडके राज्यमें संलग्न होने पर भी, ज्ञानमें तनिक भी ऐसी मचक नहीं आती कि ये मेरे हैं, और छियानवै हजार अप्सरा जैसी रानियोंके वृन्दमें रहने पर भी उनमें तनिक भी सुखबुद्धि नहीं होती । अरे ! कोई नरककी भीषण वेदनामें पड़ा हो तो भी अतीन्द्रिय आनन्दके वेदनकी अधिकता नहीं छूटती है । इस सम्यग्दर्शनका क्या माहात्म्य है - जगतके लिए इस मर्मको बाह्य दृष्टिसे समझना बहुत कठिन है।
२९९

*

दर्शनमोहको मन्द किये बिना वस्तुस्वभाव ख्यालमें नहीं आता; और दर्शनमोहका अभाव किए बिना आत्मा अनुभवमें आ सके, ऐसा नहीं है।
३००

*

आत्माको पानेके लिए तो पूरा इसके पीछे पड़ना चाहिए । इसीका रटन करना चाहिए। सोते-जागते इसीका प्रयत्न करना चाहिए । रुचिकी यथार्थता बनी रहनी चाहिए। अन्तरमें परमेश्वर कितना महान है ! उसके दर्शन के लिये कौतूहल जागे तो उसके दर्शन-बिना चैन न पड़े। ३०१

*

भाई, तेरे महात्म्यकी क्या बात ! जिसके स्मरणसे ही आनन्द आता है, उसके अनुभवके आनन्दकी क्या बात ! अहो ! मेरी सामर्थ्य कितनी? - जिसमें दृष्टि डालते ही खजाना खुल जाए, वह वस्तु कैसी ? रागको रखनेका तो मेरा स्वभाव नहीं,

पर अल्पज्ञताको भी नहीं रख सकता। स्वयंको ऐसी प्रतीति होने पर यह निश्चय हो जाता है कि 'मैं सर्वज्ञ होऊंगा,' अल्पज्ञ रहनेवाला नहीं हूँ । ३०३

*

इस वस्तुके लिए प्रयोग करने हेतु अन्तरमें-मूलसे पुरुषार्थका उफान आना चाहिए कि ''मैं ऐसा महान पदार्थ''!! ऐसे निरावलम्बनरूपसे, अन्यके आधार बिना, विचारकी धुन चलते-चलते ऐसा आए, कि बाह्य व्यापार न सुहावे । यह अभी है तो विकल्प ही, पर ऐसा लगे कि यह...मैं... यह...मैं... ऐसे धोलनका ज़ोर बढ़ते-बढ़ते इन विकल्पोंसे भी छूटकर अन्तरमें उतर जाते हैं। (निर्विकल्प होनेके पूर्व ऐसी दशा होती है ।) ३०४

*

ज्ञान और रागके बीच भेदज्ञान होनेका यह लक्षण है कि ज्ञानमें रागके प्रति तीव्र अनादरभाव जगता है - यही ज्ञान और रागके मध्य भेदज्ञान होनेका लक्षण है । आत्मामें रागकी गन्ध भी नहीं। रागके जितने भी विकल्प उठते हैं, मैं उनमें जलता हूँ, वह दुःख-दुःख और दुःख हैं, विष हैं - ऐसा ज्ञानमें पूर्व निर्णय हो; तो भेदज्ञान प्रकट होता है । ३०७

*

यदि अपने पीछे विकराल बाघ झपट्टा मारता हुआ दौड़ता आ रहा हो तो स्वयं कैसे भागते हैं ! क्या वह मार्गमें विश्रामके लिए रुकेगा ? ऐसे ही यह 'काल' झपट्टा मारता चला आ रहा है और अन्तरमें काम बहुत करना है, स्वयंको ऐसा लगना चाहिए । ३०८

*

भाई ! तूँ शरीरकी ओर न देख ! तेरे विकल्प व्यर्थ ही जाते हैं; और आत्माका कार्य भी नहीं होता। शरीर तो धोखा देगा... भाई ! तेरी आत्माका जो कुछ करना है सो कर ले । ३११

*

परसत्तावाले तत्त्वोंके ग्रहणका अभिमान, पर सत्तावाले तत्त्वोंके त्यागका अभिमान - यह अभिमान ही मिथ्यात्व है; और वह सात व्यसनके पापसे भी भयंकर पाप है । ३१२

*

जिसने एक बार प्रसन्न चित्तसे चैतन्यस्वभाव लक्ष्यगत किया, वह अवश्य ही निर्वाणका पात्र है । जिस पुरुषको निश्चयका पक्ष हुआ, उसको भले ही अभी अनुभव न हो, पर उसका वीर्य चैतन्यस्वभावकी ओर ढल रहा है। यही स्वभाव है... यही स्वभाव है- ऐसी स्वभाव-सन्मुखतामें ही ज़ोर होनेसे वह अवश्य अनुभव कर केवलज्ञान पाएगा ही । ३१४

*

## पूज्य भाईश्री शशीभाईकी ९२ वीं जन्म जयंती आनंदोल्लासपूर्वक संपन्न

आत्मानुभवसंपन्न परम उपकारी पूज्य भाईश्री शशीभाई की ९२वीं जन्म जयंती '**श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर**', भावनगरमें आनंदोल्लासपूर्वक मनाई गई । इस मंगल अवसर पर बंबई, कोलकाटा, अहमदाबाद, आग्रा, बड़ौदा, सोनगढ़ इत्यादि शहेरोंसे अनेक मुमुक्षुओंने लाभ लिया। दि. ०७-१२-२०२४ के दिन जिनमंदिरजी से एक भव्य रथयात्रा का आयोजन किया गया।

दि. ०८-१२-२०२४ जन्म जयंती के दिन बालकुंवर का पालनाझूलन, जन्मबधाई, गुरुभक्ति एवं '**अध्यात्मपिपासा**' भाग-५ (गुजराती) का विमोचन आदि कार्यक्रम सानंद संपन्न हुए ।

## पूज्य बहिनश्रीकी मुनिभक्ति

यहाँ (श्री प्रवचनसार प्रारम्भ करते हुए) कुन्दकुन्दाचार्य-भगवानको पंच परमेष्ठीके प्रति कैसी भक्ति उल्लसित हुई है! पांचों परमेष्ठीभगवंतोंका स्मरण करके भक्तिभावपूर्वक कैसा नमस्कार किया है! तीनों कालके तीर्थंकरभगनवंतोंका - साथ ही साथ मनुष्यक्षेत्रमें वर्तते विद्यमान तीर्थंकरभगवंतोंको अलग स्मरण करके - 'सबको एकसाथ तथा प्रत्येक-प्रत्येकको मैं वंदन करता हूँ' ऐसा कहकर अति भक्तिभीने चित्तसे आचार्यभगवान नम गये हैं। ऐसे भक्तिके भाव मुनिको-साधकको - आये बिना नहीं रहते। चित्तमें भगवानके प्रति भक्तिभाव उछले तब, मुनि आदि साधकको भगवानका नाम आने पर भी रोमरोम उल्लसित हो जाता है। ऐसे भक्ति आदिके शुभ भाव आयें तब भी मुनिराजको ध्रुव ज्ञायकतत्त्व ही मुख्य रहता है इसलिये शुद्धात्माश्रित उग्र समाधिरूप परिणमन वर्तता ही रहता है और शुभभाव तो ऊपर-ऊपर ही तरते हैं तथा स्वभावसे विपरीतरूप वेदनमें आते हैं। ४०७

*

मुनिराजके हृदयमें एक आत्मा ही विराजता है। उनका सर्व प्रवर्तन आत्मामय ही है। आत्माके आश्रयसे बड़ी निर्भयता प्रगट हुई है। घोर जंगल हो, घनी झाड़ी हो, सिंह-व्याघ्र दहाड़ते हों, मेघाच्छन्न डरावनी रात हो, चारों ओर अंधकार व्याप्त हो, वहाँ गिरिगुफामें मुनिराज बस अकेले चैतन्यमें ही मस्त होकर निवास करते हैं। आत्मामेंसे बाहर आयें तो श्रुतादिके चिंतवनमें चित्त लगता है और फिर अंतरमें चले जाते हैं। स्वरूपके झूलेमें झूलते हैं। मुनिराजको एक आत्मलीनताका ही काम है। अद्‌भुत दशा है! ३९४

*


## आभार

'स्वानुभूतिप्रकाश' (दिसम्बर-२०२४, हिन्दी एवं गुजराती) के इस अंककी समर्पण राशि
१) स्व. स्वाति प्रशांतभाई जैन, भावनगर एवं
२) श्री शांतिलालजी देढिया परिवार, मुंबई
की ओर से ट्रस्ट को साभार प्राप्त हुई है।
अतएव यह पाठकों को आत्मकल्याण हेतु भेजा जा रहा है।

## द्रव्यदृष्टि प्रकाशमें से पूज्य श्री निहालचंद्रजी सोगानीजी द्वारा पूज्य भाईश्री शशीभाईको लिखित पत्र (पत्रांक-४४)

कलकत्ता
१०-९-१९६३

ॐ

अज्ञानतिमिरांधानां ज्ञानांजनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

आत्मार्थी.....

पत्र आपका ता. ३-९ का मिला। पहलेवाला पत्र भी यथासमय मिल गया था। दशलक्षणी पर्व, आपने तीन लोक में परम उत्तम, निर्भय बनानेवाले, परम निर्भय, सिंहस्वरूप श्री गुरुदेव के सान्निध्य में मनायें होंगे। वह कहते हैं - ''स्वभावअंश में किंचित् भी दोष नहीं है, नित्य स्वभाव में दृष्टि थंभ जानेसे, उत्पन्न हुए सहज स्वभाव में, क्षमा आदि दूषित भाव प्रत्यक्ष पराश्रित (जड़ के) पर के हैं; अतः सहज क्षमाभाव त्रिकाल जयवंत वर्तो ! हमने कभी दोष किया ही नहीं, ऐसा स्वभाव निरंतर वृद्धि पामो। विभाव की गूँज में गूँजता हुआ अज्ञान भाव सहज नाश पामो। विभाव में तनीजो नहीं। स्वभाव-सीमा में निरंतर अडिग जमे रहो। क्षणिक विभाव वेदीजता हुआ अधिक की सीमा को पार नहीं कर सकता, अतः वहीं लय हो जाता है।''

''करता करम क्रिया भेद नहीं भासतु है,
अकर्तृत्व सकति अखण्ड रीति धरै है।
याहीके गवेषी होय ज्ञानमाहिं लखि लीजै,
याहीकी लखनि या अनंत सुख भरे है।।''

**ज्ञान कणिका पत्र द्वारा मँगवाई सो यह तो आपके पास ही है।** स्वअवलंबन से सहज ही विभाव से पृथक् होकर प्रगटती रहती है। **हे शशीभाई !** अनेकानेक जीवों की योग्यता अक्षय सुख के उदय की है, अतः तीर्थंकर से भी अधिक सत्पुरुष का योग प्राप्त हुआ है, जिनकी नित्य प्रेरणा उधर से विमुख कराकर स्वयं के नित्य भंडार की ओर लक्ष्य कराती रहती है; यहाँ से ही पूज्य गुरुदेव के न्याय अनुभवसिद्ध होकर दृढ़ता प्राप्त कराते हैं।....

''जिन (निज) सुमरो जिन चिंतवो, जिन ध्यावो सुमनेन।
जिन ध्यायंतहि परमपद, लहिये एक क्षणेन।।।''

वात्सल्यानुरागी निहालचंद्र

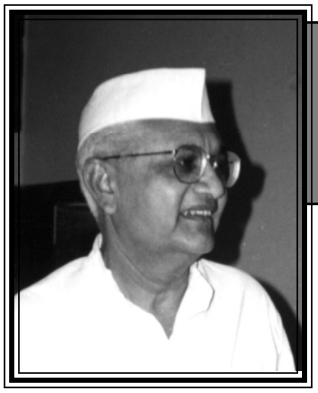

# 'धन्य आराधक'

(पूज्य भाईश्री शशीभाईका संक्षिप्त जीवन परिचय)

सामान्यतः किसी भी साधारण मनुष्यका इतिहास या जीवनचरित्र नहीं लिखा जाता, परन्तु जो स्वयं पुरुषार्थ करके अपना इतिहास बनाते हैं यानी कि जन्म-मरणका छेद करके जीवनमुक्त होते हैं, उनका जीवनचरित्र लिखा जाता है, और उनकी यशगाथा सारे लोकमें फैलती है। ऐसे ही एक पुरुषार्थवंत आत्माका - 'पूज्य भाईश्री' का जीवनचरित्र यहाँ पर प्रस्तुत है।

जंबुद्वीपके भरतक्षेत्रमें स्थित भारतदेशमें अनेक तीर्थंकर, आचार्य व ज्ञानी भगवंत होते रहे हैं। इनसे यह भूमि हर-हमेश पवित्र रही है। अनादिकालसे परिभ्रमण कर रहे अनेक जीव इस क्षेत्रमें साधना करके मोक्ष पधारे हैं। इस भारत देशके सौराष्ट्र प्रांतमें सुस्थित सुरेन्द्रनगर नामके एक गाँवमें, संवत-१९८९ के मार्गशीर्ष शुक्ल अष्टमी, दि.२४-११-१९३३ के मंगल दिन एक प्रमाणिक सद्गृहस्थ श्री मनसुखलाल लघरचंद शेठके वहाँ ऐसे ही कोई पवित्र आत्माका आगमन हुआ। माताश्री रेवाबहनकी कोख खिल उठी। प्रभावशाली पुरुषके पुनीत आगमनसे किसे हर्ष नहीं होगा?

वातावरण प्रफुल्लित व अनोखे आनंदोल्लाससे हर्षित हो उठा है। भरतभूमि फिर एकबार गौरवपूर्ण धन्यताका अनुभव कर रही है। माता-पिताके हर्षकी सीमा नहीं है। बालककी शांत व सौम्य मुखमुद्राको देखते हुए तृप्ति नहीं होती है। इस आत्माको देखकर हरकोई

जन्मधाम-सुरेन्द्रनगर

अनोखी शांतिका अनुभव कर रहे हैं। यह शूरवीर आत्माका आगमन अनन्त तीर्थंकर जिस मार्ग पर चले हैं, उस मार्ग पर चलनेके लिए हुआ है। अहो! धन्य है इस भूमिको! और धन्य हैं इनके माता-पिताको! फिर जन्म लेना ही न पड़े, इसके लिए जिसने जन्म धारण किया है। चंद्रकी चांदनी जिस तरह शीतलता फैलाती है और भूमिको श्वेत करती है, वैसे त्रिविध तापाग्निसे आकुल-व्याकुल होकर मृगजल पीनेके लिए दौड़ रहे क्लेशित आत्माओंको शीतलता प्राप्त करानेवाले और दोषकी कालिमाको धोकर पवित्र व श्वेत दशाकी प्राप्ति करानेवाले इस बालकका नाम भी 'शशीकांत' रखा गया।

**बाल्यावस्था :-**

अपने मूल वतन राणपुर गाँवमें बालकुमार शशीकांतकी नयनरम्य चेष्टाएँ देखकर सभी मन ही मन मलक रहे हैं। स्वयंकी निर्दोष चेष्टाओंसे लोगोंके मन हरनेवाले इस बालकुमारका जीवन सानंद व्यतीत होने लगा है। अभी से यह बालकुमार निडर, पापभीरु, गुण-ग्राही, स्वतंत्र विचारक और आदर्श विचारधारा

रखता है। असाधारण बुद्धिमत्ताके कारण स्कूलमें प्रायः प्रथम या द्वितीय क्रम पर उत्तीर्ण हो रहा है। करीब ९-१० सालकी उम्रमें दादाजी द्वारा धार्मिक संस्कारका सिंचन शरू हुआ। वैष्णव कुटुम्बमें जन्म होनेके कारण रामायण, गीता, महाभारत, भागवत इत्यादि ग्रंथका पठन करने लगा। बहुत तेज़ स्मरणशक्तिके कारण देखते ही देखते इस बालयुवकने श्रीमद् भगवत् गीताके दो-तीन अध्यायके संस्कृत श्लोक तो कंठस्थ कर लिए। यह बालयुवक प्रत्येक कार्य चुस्तता व दृढ़ मनोबलपूर्वक कर रहा है। अरे! यह तो अलौकिक आत्मा! जो आत्माकी साधना करनेवाला है, वह सामान्य बालककी कोटिमें कैसे आयेगा? बालककी चुस्तता व दृढ़ मनोबलके दर्शन हम निम्न लिखित प्रसंगसे करें।

गरमीका मौसम चल रहा है, आकाशमें सूर्य तेज़ धूपके साथ गरमी फैला रहा है। ऐसी तीव्र धूपमें स्कूलके मैदानमें आर.एस.एसकी परेड चल रही है। परेडके दौरान इस बालकका अत्यंत तृषाकी वजहसे कंठ सूखने लगा, फिर भी नियमका पालन चुस्ततासे करनेका दृढ़ निश्चय होनेसे यह बालक किसीको बोला नहीं। एक ओर चिलचिलाती धूप और दूसरी ओर कठोर परिश्रम, ऐसी परिस्थितिमें सूखा हुआ कंठ जैसे मानो पानीकी एक-एक बूँदके लिए पुकार कर रहा हो, तब ऐसेमें परेड करीब-करीब पूरी होनेके पहले बालक चक्कर खाकर गिर पड़ा, लेकिन अपनी चुस्तता व निश्चयको नहीं छोड़ा। देखिये! इस बालककी चुस्तता और दृढ़ मनोबल!

कुमार शशीकांतकी स्वंतत्र विचारधारा व अनुभव प्रधानताके दर्शन भी निम्न प्रसंगसे करने योग्य है। १४ सालकी उम्र है, युगपुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी जैसे महाप्रतापी सत्पुरुष राणपुरमें पधारे हैं। कुमार शशीकांतको उनके आत्मकल्याणकारी मंगल प्रवचन सुननेकी उत्कंठा जगी और प्रवचन सुनने जाता है। प्रवचनमें पूज्य गुरुदेवश्रीने फरमाया कि 'देखो! आत्मामें ज्ञान स्वयं हो रहा है, यह ज्ञान वाणीसे उत्पन्न नहीं होता, नाहि गुरुसे उत्पन्न होता है, परन्तु स्वयं ही उत्पन्न हो रहा है' - यह बात सुनते ही 'देखो' ऐसा शब्दप्रयोग हुआ था, इसलिए यह कुमार शशीकांतने अंदरमें देखा तो उसे मालूम पड़ा कि, 'सचमुच, मेरा ज्ञान भी स्वयं, सहज उत्पन्न हो रहा है।' देखा! पूर्वसंस्कारवश अनुभवपद्धति कैसे जागृत हो जाती है! ऐसे-ऐसे तो अनेक सद्गुण संपन्न कुमार अब युवावस्थामें प्रवेश करता है।

**युवावस्था :-**

असाधारण बुद्धिमत्ताके कारण पढ़ाईमें बहुत-बहुत तरक्की करनेके विचार आने लगे और एफ.आर.सी.एस (लंडन) डॉक्टर बननेकी तीव्र महत्त्वाकांक्षा चलने लगी। परन्तु प्रारब्ध कुछ और ही था! (उन्हें तो भवरोगको मिटानेका वैद्य बनना था!) इसलिए उन्हें कुटुम्बकी आर्थिक परिस्थिति अत्यंत कमजोर होनेसे युवावयमें प्रवेश होते ही मैट्रीक तक अभ्यास पूर्ण करके पिताजीके व्यवसायमें जुड़ना पड़ा। उनकी कार्यकुशलता, बुद्धिमत्ता व प्रामाणिकताको देखकर उनके एक स्नेही द्वारा बम्बई जैसे बड़े प्रवृत्तिक्षेत्रमें जानेकी प्रेरणा मिलने पर एक बड़े कमीशन एजंटके वहाँ नौकरीमें लग गये।

इसी अरसेमें बम्बईमें विरमगामके श्री दोशी किरचंद लक्ष्मीचंदकी सुपुत्री, चंद्रावतीके साथ उनकी सगाई

हुई। इन्हीं दिनोंमें पांडुरंग शास्त्रीजी को सुननेका प्रसंग पड़ा और तत्त्व ज्ञान सम्बन्धित रस जागृत हुआ। महात्मा निश्चल-दासजी कृत श्री विचारसागर ग्रंथ पढ़नेमें आया, इस वांचनसे तत्त्वविचार और मंथन तीव्रतासे चलने लगा। अंतरंगमें ऐसी परिस्थितिके दौरान सम्यक्ज्ञानका अनुसरण करे वैसा दृष्टिकोण साध्य करनेका उनका अभिप्राय बना, वह इसप्रकार कि, 'चाहे किसी भी प्रसंगमें उस परिस्थिति सम्बन्धित मेरा निर्णय यथार्थ ही हो, वैसा दृष्टिकोण मुझे प्राप्त कर लेना चाहिए।' इस विषयमें निरंतर चिंतन-मंथन चलने लगा।

शुरूसे ही आदर्शकी मुख्यतावाली विचारधारा, तत्त्वज्ञानका रस, कुलधर्मका अपक्षपात, मध्यस्थता, तथापि सांप्रदायिक धर्मका आकर्षण व अंधश्रद्धाका अभाव इत्यादि सद्गुण समेत जैनदर्शनके प्रति उन्हें किस प्रकार आकर्षण हुआ, यह भी दर्शनीय है।

एक वक्त बम्बईमें दुकान पर बैठे थे, तब साथमें काम कर रहे एक सद्गृहस्थने सामनेसे चलकर हाथ जोड़कर क्षमा माँगी। तब उन्होंने सआश्चर्य क्षमा माँगनेका कारण पूछा, तो उन्हें मालूम पड़ा कि जैनधर्ममें इसप्रकार सालभरमें एकबार जो-जो भूल हुई हो, चाहे नहीं हुई हो, इसके लिए क्षमा माँगी जाती है, तब सानंदाश्चर्य सहित जैनदर्शनके प्रति अहोभाव जागृत हुआ और आकर्षण भी हुआ। तब उन्हें राणपुरमें बचपनका वह प्रसंग भी याद आया कि वहाँ भी जैनियोंके घरमें कैसी रीति-नीति होती है, वह प्रसंग तादृश्य हो गया। एकबार किसी जैनके घर जानेका प्रसंग पड़ा था, वहाँ रसोईके लिए कंडे इकट्ठे किये हुए थे, जब उसे जलानेके लिए लेते थे, तब चूल्हेमें डालनेसे पहले उसे झाड़ते थे कि कहीं उसमें कोई जीव-जंतु तो नहीं है न ? या अगर हो तो निकल जाये। ये देखकर उनको ऐसा लगा कि जैनदर्शनमें छोटे से छोटे जीवकी भी हिंसा न हो, इसकी कितनी सावधानी रखी जाती है!! अहो! पूतके लक्षण पालनेमें!

देखिये! इस कहावत अनुसार जिनके द्वारा समस्त जिनशासनकी प्रभावना होनेवाली है, ऐसे इस पवित्र आत्माको गुणदृष्टि होनेसे दूसरेके गुण प्रति कितना प्रमोद आता है! इसतरह जैनदर्शन और कुलधर्म (वैष्णवधर्म) की तुलना सहज होने लगी। बम्बईमें अतिशय कार्यभार व सख्त परिश्रमके कारण उनका स्वास्थय बिगड़ा, इसलिए बम्बई छोड़कर भावनगर आना हुआ और भावनगरमें एक संबंधीकी दुकान पर नौकरीमें लग गये।

अब, यहाँ भावनगरमें तत्त्वज्ञानके रसको पुष्टि नहीं मिलती थी इसकी क्षति महसूस होने लगी। किसीका सत्संग नहीं है और नाहि कोई तत्त्वज्ञानकी बात करनेवाला दिखता है, इसलिए मन उदास रहने लगा। परन्तु जिनके आत्माके परिभ्रमणका किनारा अब नज़दीक हो, उनसे सत्य आखिर कब तक दूर रहता? क्या भावनाके साथ कुदरत बंधी हुई नहीं है? अरे! अवश्य बंधी हुई है!

**दिशाबोध:-**

एक ओर सत्संगका अभाव, स्वयंकी तत्त्वज्ञान सम्बन्धित रुचि-रसको आवश्यक पोषणका अभाव, दूसरी ओर अंदरमें सत्यकी खोज व सुखसे वंचित अंतरंग अतृप्त अंतरपरिणति, ऐसी स्थितिमें विधिकी किसी धन्य बेलामें एक दिन खुद दुकान पर काम कर रहे थे, तब पासमें पड़े एक ग्रंथ पर नजर पड़ी, ग्रंथका

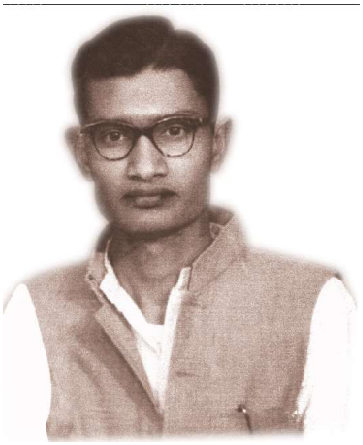

नाम पढ़ते हैं - 'श्रीमद् राजचंद्र'। जैन दर्शनमें प्रवेशका यह प्रथम कारण उन्हें आज मिल गया। यह प्रसंग मुक्तिकी दिशामें मंगलकारी बना। जिज्ञासापूर्वक ग्रंथके कुछएक पन्ने वे देखने लगे तो उन्हें लगा कि, यह तो कोई तत्त्वज्ञान विषयक ग्रंथ है। फिर तो विशेष अभ्यास करने पर ग्रंथकार कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजीके वचनामृतोंसे वे अत्यंत प्रभावित होते गये। कृपालुदेवकी मध्यस्थताको देखकर उनका हृदय प्रफुल्लित हो उठा। स्वयंके तत्त्वज्ञानकी रुचिको पुष्टि मिलने लगी। फिर तो क्या कहना! अंतरंगमें अतृप्त परिणतिको मानो जैसे कोई विश्रांतिका स्थान मिल गया!!

इस ग्रंथको पढ़नेके पश्चात् उन्हें ऐसा लगा कि, जैनदर्शनमें जीव और जड़ परमाणुका विज्ञान है और दोनों पदार्थके निमित्त-नैमित्तिक संबंधकी जितनी असर जीव लेता है, उतनी सुख-दुःखकी उत्पत्ति होती है। यदि इस सुख-दुःखकी समस्याका उपाय मिल जाये तो हमेशके लिए बहुत बड़ी उपलब्धि हो जाये, ऐसा उन्हें लगा। इस आकांक्षा सहित जैनदर्शनकी गहराईमें जानेका अत्यंत रस उत्पन्न हो गया। गुण-दोषकी चर्चा, पदार्थका वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे, नय, प्रमाणकी पद्धतिसे सुव्यवस्थित प्रतिपादनको देखकर उनके हृदयमें जैनदर्शनकी सर्वोत्कृष्टता अंकित हो गई। अनन्तकालसे चल रहे जन्म-मरण और इसके दुःख व क्लेशसे छूटनेका एक मात्र उपाय आत्मज्ञान है, इस बात पर ध्यान गया। अतः यदि ज्ञानी मिलते हो तो सातवें पाताल तक जानेके लिए मैं तैयार हूँ, इस अभिप्राय सहित कोई आत्मज्ञानीका सान्निध्य पाकर अपने सभी परिणामोंका निवेदन करके मार्गदर्शन पानेका सर्वप्रथम मंगल विचार उन्हें आया। कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजीके सत्संगके महत्त्व विषयक उन्हें यथार्थ मूल्यांकन आया और सत्संगकी तीव्र भावना रहने लगी। फिर तो कहावत है कि ''जहाँ चाह है, वहाँ राह है'' - वैसे उनकी भावना सफल हुई और एक धर्मप्रेमी मुमुक्षुके वहाँ सत्संगकी सुमंगल शुरुआत हुई।

**निज परमात्माके वियोगकी वेदना व तड़पनः-**

कृपालुदेव - ''श्रीमद् राजचंद्र'' ग्रंथका अत्यंत गहन अवगाहन चल रहा है, और इसमेंसे सुख-दुःखकी समस्याका उपाय मिलनेकी संभावना दिखने पर इस समस्याको सुलझानेके लिए उनका हृदय इसकी गहराईमें जाने लगा। सच्चा सुख कहाँ है? दुःखकी निवृत्ति कैसे हो? सर्व प्रकारसे दोषसे निवृत्त कैसे हुआ जाये? ये जन्म-मरण क्यों? जन्म-मरणका आत्यंतिक वियोग किस विधिसे हो सकता है? ऐसे-ऐसे अनेक प्रश्न उनके हृदयमें छा गये। ऐसी अंतरंग स्थितिके दौरान सत्संगकी शुरुआत हुई और हररोज प्रातःकाल करीब ४-०० बजे सत्संगमें जाना शुरू किया। एक ओर कृपालुदेवके ग्रंथका अध्ययन और दूसरी ओर अंतरंग परिणामोंकी ऐसी स्थिति!

सुबह ४-००बजे एकांतका समय है। कड़ाकेकी ठंडमें सारा विश्व भावनिद्रा व द्रव्यनिद्रामें सो रहा है, तब जन्म-मरणकी समस्याका उपाय खोजनेके लिए निकला हुआ यह धीर-वीर आत्मा, गंभीर व शांत चालसे चलते-चलते सत्संगमें जा रहा है। तब बगलके गाँवसे आधी रातको निकला हुआ एक किसान अपनी बैलगाड़ीमें शहरसे कूड़ा (खाद) इकट्ठा करने चला आ रहा है। उसे देखकर उन्हें विचार आया कि, इतनी तुच्छ वस्तुकी प्राप्तिके लिए भी यह किसान कितना

परिश्रम व प्रतिकूलताओंको भोगता है! जब कि मैं तो जगतका सर्वोत्कृष्ट कार्य करने निकला हूँ तो इसके लिए चाहे कितनी भी कीमत यदि चुकानी पड़े तो इसमें क्या विशेषता है? बस! फिर तो इस-इस प्रकारकी मंगल सुविचारणा और आँखसे अविरत बहती अश्रुधाराको कौन रोक सके ? कोई रोकना भी चाहे तो रोक नहीं सके ऐसी हृदय द्रावक वेदनाके बीच अंतरंगका शुद्धिकरण हुआ और हृदयसे तीव्र वेदना सहित ध्वनि निकल पड़ी...

''हे प्रभु ! हे प्रभु ! शुं कहुं, दीनानाथ दयाळ,
हुं तो दोष अनंतनुं, भाजन छुं करुणाळ।।
अनन्तकाळथी आथडयो, विना भान भगवान,
सेव्या नहि गुरु सन्तने, मूक्युं नहि अभिमान।।
अधमाधम अधिको पतित, सकल जगतमां हुंय,
ए निश्चय आव्या विना, साधन करशे शुंय?''

-श्रीमद् राजचंद्र

'निज दोषका अत्यंत पश्चाताप हुए बिना पवित्रताकी शुरुआत नहीं होती' - इस सिद्धांत अनुसार अनन्तकालसे चले आ रहे निजदोषका अत्यंत तीव्र पश्चाताप व निज परमात्मस्वरूपके वियोगकी वेदनासे पीड़ित उनका हृदय तीव्र आकुल-व्याकुल रहने लगा। इसप्रकार इस वेदनासे संसारकी उपासनाका अभिप्राय मिटा और अंतःकरणकी अत्यंत शुद्धि हुई।

**पूर्णताका लक्ष्य:-**

उपरोक्त वेदनाके कारण उत्पन्न हुई उदासीनतासे बाहरमें कहीं पर रस नहीं आता, जिसके कारण जीवन रसविहीन हो गया। एकमात्र आत्मकल्याण कैसे हो? बस! एक ही धुन लगी रहती। उनके अंतरंगको देखे तो कुटुम्बकी कमजोर आर्थिक परिस्थिति होने पर भी अनेक प्रकारकी भौतिक सुख सम्बन्धित लौकिक महत्वाकांक्षाओंका हृदयसे त्याग हुआ। उस वक्त एक क्षणके लिए भविष्यकी चिंताका विचार आ भी गया तो इस पुरुषार्थी जीवने उसे ठोकर मार दी और शुद्ध अंतःकरणसे आत्मकल्याण कर ही लेना है, ऐसे निश्चयका जन्म हुआ और अंतरंगमें एक लयसे इस महान् सिद्धिकी उपलब्धिके लिए कार्यशील हो गये। देखिये! कैसा अद्भुत संवेग प्रगट हुआ है!! जिसप्रकार बादलको देखकर सूर्य वापिस नहीं मुड़ता और नदीका पानी बीचमें पड़े हुए पत्थरकी छाती चीरता हुए आगे बढ़ता है - वापिस नहीं मुड़ता, वैसे दृढ़ निर्धारपूर्वक चल रहे इनके परिणामोंको अब विश्वकी कोई भी ताकत रोक सकती है क्या?

जीवनमें सिर्फ एक ही लक्ष्य / ध्येय हो गया। जीवनमें संपूर्ण शुद्धिकी उपासना करते-करते चाहे कैसी भी अग्नि परीक्षामेंसे गुज़रना पड़े फिर भी आत्मकल्याण शीघ्रतासे कर ही लेना है, ऐसा भाव बार-बार रहा करता है। असाधारण निश्चय शक्ति एवं परमार्थके लिए प्रतिकूल प्रियजनोंके विपरीत अभिप्रायके सामने अटल रहनेकी, नाहिंमत नहीं होनेरूप वज्रसमान हिंमतके साथ लड़ना और फिर भी निर्दोष वृत्तिके साथ अनादिसे चले आ रहे अज्ञान-अंधकारसे निकलनेके लिए इनकी खोज शुरू हुई। ऐसे असाधारण निश्चयके साथ आगे बढ़ रहा यह आत्मा न तो सिर्फ उलझनमें उलझा रहता है, नाहि प्रमाद करता है, बल्कि अत्यंत धीरज व गंभीरता समेत मार्ग ग्रहण करनेके प्रयत्नमें लगा है।

देखिये! कैसे असाधारण गुण प्रगट हुए हैं! मुमुक्षुता देदीप्यमान होकर झलक उठी है ! जिसको छूटना ही है, उसे कोई नहीं बाँध सकता। - इस सिद्धांत अनुसार इस भव्यात्माके अद्भुत गुणोंको देखते-देखते हृदय झुक जाता है। अनन्तकालमें जो सत्पात्रता प्राप्त नहीं हुई थी, वह सत्पात्रता प्रगट हुई! इसप्रकार सम्यक्दर्शनको रखनेका पात्र तैयार हो गया!!

**निज दोषका अपक्षपातरूप अवलोकन:-**

''निर्दोष होनेकी प्रथम सीढ़ी अपने दोषको कबूल करना वह है'' - इसी सिद्धांत अनुसार अडोल वज्र जैसी हिंमतके साथ निर्दोष होने निकला यह आत्मा अब अपने दोषोंका अपक्षपातरूपसे अवलोकन कर रहा है और इन दोषोंको मिटानेके लिए अमलीकरण भी कर रहा है। इन दिनों कृपालुदेवके ग्रंथका गहन चिंतन और मंथन चल रहा है। प्रत्येक बातके यथार्थ निश्चय हेतु चलते हुए परिणामका अवलोकनपूर्वक प्रयोग पद्धतिसे कार्य चल रहा है। देखा! कैसी आत्मसूझ आयी है। अनुभव पद्धतिसे कार्य करनेकी अंतरंगसे सूझ ऐसे मोक्षार्थीको ही आती है। अब बाहरमें कृपालुदेवके ग्रंथसे मिलता मार्गदर्शन और अंदरमें प्रयोग पद्धति, दोनोंसे अनेक प्रकारके पूर्वाग्रह और विपर्यास कमजोर होने लगे। फिर तो इस अपक्षपातरूप दोषोंके अवलोकनके सातत्यसे अंदरमें ज्ञानकी निर्मलता बढ़ती गई, बढ़ती गई...!

**सत्पुरुषमें परमेश्वरबुद्धि:-**

परम तारणहार कृपालुदेवका आत्मकल्याण हेतुभूत मार्गदर्शनका मूल्यांकन अतिशय बढ़ता चला। उन्हें उपकारी श्रीगुरुकी छविमें परमात्माके दर्शन हुए। श्रीगुरुके भौतिक देहकी छवि - मनुष्याकृति गौण होकर भावात्मक परमात्माके दर्शन होते ही हृदय अश्रुसे सिक्त हो गया! अनन्तकालसे भटक रहे इस आत्माके कल्याण हेतु ही न जाने इस ग्रंथकी रचना हुई होगी, ऐसा बार-बार उन्हें लगने लगा। इसप्रकार कृपालुदेवको केवल एक सत्पुरुषकी नज़रसे नहीं देखा बल्कि एक तारणहार परमात्मारूप देखने लगे। हृदयसे पुकार उठती है, अहो! ये पुरुष इस विषमकालमें मेरे लिए परम शांतिके धामरूप व कल्पवृक्ष समान हैं। अहो! अधिक क्या कहे ? मेरे लिये तो ये दूसरे श्री राम और श्री महावीर ही हैं! इसप्रकार इन्हें कृपालुदेवकी भक्तिमें लीन होकर उनके लक्षणोंका चिंतन चलने लगा और उनकी मुखाकृतिका हृदयसे अवलोकन होने लगा। अहो! ज्ञानियोंके हृदयमें रहे हुए व निर्वाणके लिए मान्य करने योग्य परम रहस्यको वे एक मृत्युसे बचानेवालेका उपकार भी विस्मृत नहीं होता, तो जो अनंत जन्म-मरणसे बचाये उनके प्रति परमेश्वरबुद्धि क्यों नहीं आयेगी? जरूर आयेगी। इसतरह सर्व शास्त्रोंके व सर्व संतके हृदयमें रहे मर्मरूप बीजकी प्राप्ति हुई अर्थात् प्रथम समकितकी प्राप्ति हुई। उक्त परिणामसे ज्ञानमें निर्मलता आने लगी, आत्मरुचि तीव्र होती चली और अंदरसे आत्माको अनन्तकालमें जो नहीं प्राप्त हुई थी, वैसी अपूर्व जागृति आयी। यह जागृति अपूर्व है ऐसी सम्यक् प्रतीति आयी।

**अंतर खोज:-**

उपरोक्त निर्मल परिणामके साथ-साथ आत्मरुचि तीव्र होती चली। स्वरूप प्राप्तिकी तीव्र जिज्ञासा वश उत्पन्न वैराग्यने एक नये स्तरमें प्रवेश किया। निज परमात्मस्वरूपकी अंतर खोजमें यह भव्य आत्मा इतना तो खोया-खोया रहने लगा कि बाह्य व्यवहारमें और खाने-पीने इत्यादि नित्यक्रममें लक्ष भी नहीं रहता था। वैराग्यके कारण उदासीनतामें इतना रहने लगा कि खाते वक्त क्या खा रहा है? उसका खयाल भी नहीं रहता था। खानेमें कौनसी चीज पूरी हो गई? उसका भी खयाल नहीं रहता था। पहनावेमें और रहन-सहनमें इतनी तो सादगी आ गई कि घरवालोंको ऐसी दहशत होती है कि कहीं जैनधर्मकी दीक्षा तो नहीं ले लेगा? अहा! धन्य है यह उदासीनता!

आत्मसाधना करनेके लिए निकले इस आत्माको

संसारमें सुहायेगा भी क्या ? जैसे हंसको मोतीका चारा करनेमें ही रस है; वैसे साधक आत्माको निज स्वरूपके अलावा अन्य कहीं भी रस नहीं आता। जहाँ सुखकी सहेली और अध्यात्मकी जननी उदासीनता मौजूद हो, वहाँ सत्य सुख और आत्मानुभव आखिर कितने दूर रहेगा ? अर्थात् अब तो वह अवश्य प्रगट होगा।

**स्वरूप निश्चय:-**

अहो ! जिसके आधारसे अनन्तकालके सुखकी प्राप्ति होनेवाली है, जिसके आधारसे अनन्तकालसे चली आ रही जन्म-मरणकी श्रृंखला टूटनेवाली है; और जिसके आधारसे अतृप्त आत्मा परितृप्तताको प्राप्त होगा, ऐसे निज स्वरूप प्राप्तिकी तीव्र जिज्ञासावश उत्पन्न वैराग्य एवं उदासीनतासे यह आसन्न भव्य जीवके ज्ञानमें निर्मलता बढ़ती चली। ज्ञानमें स्वभाव और विभाव जातिकी परख करनेकी क्षमता प्रगट हुई। सर्व प्रकारके विभावभाव आकुलतारूप, मलिनतारूप और विपरीत स्वरूप भासित होने लगे। चलते हुए ज्ञानके साथ बार-बार विभाव भावका मिलान चल रहा है और इसके नतीजेमें ज्ञान बिलकुल अनाकुल, पवित्र और अविपरीत स्वरूप भासित होने लगा। इसतरह अंतर खोजके साथ चल रहे अवलोकनसे जातिकी परख आनी शुरू हुई। ऐसेमें कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रके सातिशय वचनयोगके लिए गौरव समान धन्य दिन आ पहुँचा ! कि जिस दिन अंतरंगमें निज परमात्माका स्पष्ट अनुभवांशसे पता लग गया। चलती हुई ज्ञान पर्यायमें ज्ञान सामान्य / वेदनके आधारसे अखंड एकरूप अनन्त ज्ञान व अनन्त सुखके सामर्थ्यरूप सहज स्वरूपका भावभासन हुआ। लौकिक समुद्रको तो तलवा होता है, लेकिन ये निज सुख समुद्रको कि जिसे तलवा ही नहीं है, इसे देखते ही पुरुषार्थने उछाला मारा। निज सिद्धपदका साक्षात् अस्तित्व ग्रहण होनेसे निज स्वरूपकी अपूर्व महिमा चालू हो गई। गुण निधानकी अनन्य रुचिका उछाला स्वरूप सन्मुखताके पुरुषार्थपूर्वक शुरू हुआ। जिसके कारण उदयभावमेंसे उपयोग बार-बार छिटक-छिटक कर स्वरूपके प्रति आने लगा।

इस प्रक्रियाने दिन-प्रतिदिन वेग पकड़ा। संवेग और निर्वेद - दोनों प्रकारके परिणाममें अप्रतिम जोरके कारण स्वरूपलक्षके परिणामपूर्वक निज परमात्मपदकी धुन चढ़ गई और पुरुषार्थका वेग फाटफाट चलने लगा। जैसे मानो अंदरसे पुरुषार्थका बंबा फटा न हो! अनन्तकालसे सुखके लिए बाहर भटक रहे उपयोगको विश्रांतिका स्थान मिल गया। जन्म-मरणकी जटिल समस्याका निवारण हुआ । फिर तो विश्वमें ऐसी कौनसी शक्ति है कि, जो इस पुरुषार्थको रोक सके या उपयोगको निज परमात्मासे अलग रख सके ? निज स्वरूपसे अन्य-अलग नहीं रह सकती। वर्तमान पर्यायने स्वरूपके साथ अनन्य होनेके लिए पूरी शक्तिसे पुरुषार्थ उठाया।

**आत्मसाक्षात्कार:-**

इन्हीं दिनोंमें श्री दीपचंदजी कासलीवाल कृत 'अनुभवप्रकाश' ग्रंथ इनके हाथ लगा। अब इसमें रहे वचन अनुसार स्वरूप लक्ष सहित भेदज्ञानका प्रयोग चल रहा है। 'अनुभवप्रकाश' ग्रंथके गहन अभ्यासपूर्वक रसास्वादन करके ज्यों एक पानीदार अश्व उसके मालिकके एक ही इशारे पर तेज़ रफतारसे दौड़ने लगता है, त्यों इस पूर्व संस्कारी आत्माके अंतरंग परिणमनमें अप्रतिहत भावसे पुरुषार्थकी धारा बहने लगी।

२१ सालकी उम्र है। बाहरका दिखाव एकदम साधारण होने पर भी भीतरमें इस आत्माको अब निज परमात्मपदका पता लग चुका है, यह किसीके अंदाजमें आना भी मुश्किल है। १०० रुपये तन्खाकी नौकरी

करते हुए भी इस भव्य आत्माको ऐसा लगता है कि 'मैं परमेश्वर हूँ' और 'तीनलोकका नाथ हूँ' अंतरंग परिणति पलट गई और स्वरूप सन्मुखताके पुरुषार्थपूर्वक भेदज्ञान धारावाहीरूपसे चलने लगा। वह कैसे ? कि,

पूर्वकर्म अनुसार शुभाशुभ भाव और क्रमशः उदयके प्रसंग हैं; उन सबसे मैं ज्ञानमय होनेसे भिन्न हूँ - ऐसा समभावपूर्वक - स्वका ज्ञानरूप वेदन करनेका पुरुषार्थ चल रहा है। प्रति क्षण, प्रसंग-प्रसंग पर इस प्रकारका पुरुषार्थ चालू है। ज्ञानमें स्व-अस्तित्वका ग्रहण वेदनपूर्वक होनेसे चिद्रस उत्पन्न हुआ यह चिद्रस सहजरूपसे परिणतिमें मिला। परिणति उपयोगको बार-बार अपनी ओर खींचने लगी। - वारंवार इसी भेदज्ञानके अभ्यासके फलस्वरूप निर्विकल्प स्वरूपके आश्रयसे निर्विकल्प शुद्धोपयोग उत्पन्न हुआ और आत्माके प्रदेश-प्रदेशसे स्वसंवेदनज्ञान और अपूर्व आनंदका अनुभव हुआ...! जन्म-मरणकी श्रृंखला टूट गई, और परिणतिमें आनंदकी बाढ़ आयी जिसके साथ अनादिकालसे कर्तृत्वके बोझ तले दबी हुई परिणति मुक्तताका अनुभव करने लगी। अनुपम अमृत आस्वादसे परिणति तृप्त हुई। अहो ! धन्य है इस अज़ोड पुरुषार्थको ! धन्य है इनकी पवित्र साधनाको!

**युगपुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी एवं अन्य धर्मात्माओंका प्रत्यक्ष समागमः-**

सुवर्णपुरी सोनगढ़में पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा उपदिष्ट प्रवचनोंके संकलनको प्रकाशित कर रही मासिक पत्रिका 'आत्मधर्म' के ४-५ अंक किसी मुमुक्षु द्वारा मिले उसका अभ्यास किया। जिससे पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रत्यक्ष समागम करनेकी प्रेरणा हुई। तत्पश्चात् सोनगढ़में पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन सुननेका प्रथम प्रसंग बना। प्रवचनके बाद हुआ ऐसा कि, पूज्य गुरुदेवश्रीके पूछने पर इनके साथमें जो मुमुक्षुभाई थे, उन्होंने इस तरह पहचान करवाई कि 'ये भाई वैष्णव

हैं, लेकिन जैनधर्ममें अच्छा रस रखते हैं' - यह सुनते ही पूज्य गुरुदेवश्री बोले ''हमारे यहाँ तो कोई वैष्णव भी नहीं है और नाहि कोई जैन है, हमारी दृष्टिमें तो सब आत्मा ही आत्मा हैं।'' ये समदृष्टि भरे पूज्यश्रीके वचन सुनकर, उनके प्रति आकर्षण बढ़ा और बादमें प्रवचन सुननेका प्रसंग बढ़ता गया। प्रथम ४-५ प्रवचन परीक्षादृष्टिसे और चिकित्सावृत्तिसे सुने, जिससे इस निष्कर्ष पर आये कि 'ये तो कोहिनूर हीरा है, इसमें परीक्षा करनेकी जरूरत ही कहाँ है!' फिर तो पूज्य गुरुदेवश्रीका आत्मज्ञानीके रूपमें स्वीकार होने पर अधिक से अधिक उनका सत्संग मिले, ऐसी भावना रहने लगी। पूज्य गुरुदेवश्रीके जिनमार्ग प्रभावनाके उदयको देखकर इनका भी ऐसा अभिप्राय बना कि, 'यदि इस अलौकिक जग-हितकर मार्गकी प्रभावना करनेमें 'पेट पर पाटा बाँधकर अर्थात् (खाना कम खाकर भी समर्पण करना पड़े) तो भी मंजूर है, लेकिन प्रभावना करनी चाहिए' देखिये तो सही ! इन्हें कैसी अद्भुत मार्गभक्ति प्रगट हुई है !!

पूज्य गुरुदेवश्रीसे आत्मीयता बढ़ती चली जिसमें स्वयंकी परिणतिके रसको पुष्टि मिल रही थी। यह देखकर उनके साथ कईबार एकांतमें चर्चाका प्रसंग

बनने लगा। दो ज्ञानीपुरुषके बीच कैसी ज्ञानगोष्ठी चलती होगी !! पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचनके दौरान वात्सल्यपूर्ण संबोधन और खास सूक्ष्म विषयके स्वाध्याय वक्त एक-दूसरेका स्मरण - ये इन दोनोंके बीच रहे अद्वितीय प्रेमकी प्रतीति कराता है। एक प्रभावशाली युगपुरुषके प्रेम सान्निध्यमें सुदीर्घकालीन योग संप्राप्त होनेसे 'सोनेमें सुहागा' जैसी परिस्थिति बन गई।

पुनः जिन्होंने पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीकी दिव्य वाणीके प्रथम चमत्कारिक स्पर्शसे ही विश्वकी उत्तमोत्तम वस्तुकी प्राप्ति कर ली थी, ऐसे पुरुषार्थमूर्ति पूज्य श्री निहालचंद्रजी सोगानीके समागममें आना हुआ। पाँच साल तक इनके घनिष्ट परिचयमें रहे, जिसमें पूज्य सोगानीजीकी उग्र अध्यात्म परिणतिके उन्होंने बहुत समीपतासे दर्शन किये और अपनी अध्यात्मदशाको आविर्भूत किया। इस दृष्टिकोणसे पूज्य सोगानीजीका भी उपकार भासित होता था। पूज्य सोगानीजीकी चिर विदाईके बाद, उनके पत्रों और तत्त्वचर्चाका संकलन करके 'द्रव्यदृष्टिप्रकाश' जैसे अध्यात्मके उच्च कोटिके ग्रंथका उन्होंने प्रकाशन किया। इस तरह पूज्य सोगानीजी जैसे एकावतारी, अद्वितीय महापुरुषके अक्षरदेह द्वारा उनकी तीव्र ज्ञानदशाका मुमुक्षु समाजको दर्शन कराकर मुमुक्षु समाज पर बहुत बड़ा उपकार किया।

बादमें पूज्य गुरुदेवश्रीकी सभामें धर्मकी शोभारूप पूज्य बहिनश्री चंपाबहिनके प्रत्यक्ष परिचयमें रहनेका सौभाग्य भी उन्हें संप्राप्त हुआ। पूज्य बहिनश्रीकी सेवा, भक्ति व समर्पणका अपूर्व लाभ भी उन्होंने लिया। इस दुषमकालमें कि जहाँ एक धर्मात्माका योग होना भी मुश्किल है, वहाँ इस भव्यात्माको तीन-तीन धर्मात्माओंका प्रत्यक्ष समागम मिला, यह इनकी सत्संगकी अलौकिक भावनाका ही फल है। इस तरह सारा जीवन प्रगाढ़ सत्संग एवं ज्ञानियोंकी भक्तियुक्त बना।

**प्रभावना योग:-**

पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रभावना योगको देखकर स्वयंको जो प्रभावना संबंधित भावना थी उसे सर्व प्रकारसे उन्होंने साकार की। जिसमें मुख्यतः श्री सीमंधरस्वामी जिन मंदिर - भावनगर, श्री परमागम मंदिर - सोनगढ़, श्री नंदीश्वर जिनालय - सोनगढ़, जैसे जिनमंदिरके निर्माणकार्यमें गुप्त रहकर अपूर्व भक्तिपूर्वक समर्पण किया। तद्उपरांत पूज्य गुरुदेवश्रीकी भावि पर्याय - तीर्थंकर 'सूर्यकीर्ति भगवान'की स्थापना अनेक मंदिरोंमें करवाकर पूज्य बहिनश्री चंपाबहिनकी भावनाको मूर्तिमंत स्वरूप दिया।

तथापि उनकी प्रेरणासे और पूज्य गुरुदेवश्रीकी सम्मतिपूर्वक शास्त्र प्रकाशनार्थ 'श्री वीतराग सत् साहित्य प्रसारक ट्रस्ट,' भावनगर की स्थापना हुई। जिसमेंसे अभी तक लाखों ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं, तद्उपरांत वर्तमानमें प्रकाशित हो रहे हैं।

इसके अतिरिक्त उन्होंने विविध आचार्यों व ज्ञानियों द्वारा लिखित करीब १०० शास्त्रोंका, जैसे कि श्री समयसार, श्री प्रवचनसार, श्री नियमसार, श्री परमात्मप्रकाश, श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, श्री समयसार कलशटीका, श्री अनुभवप्रकाश, श्री अष्टपाहुड, श्री पंचाध्यायी, श्री चिद्विलास, श्री सम्यक्ज्ञान दीपिका, श्री नाटक समयसार, श्रीमद् राजचंद्र वचनामृत एवं अनेक पुराणोंका गहन अभ्यास करके उनके रहस्यको व मर्मको स्वयंकी मौलिक व सरल शैलीमें प्रवचन करके मुमुक्षुओंको अमृतपान कराया। निष्कारण करुणासे ३५-३५ साल तक उन्होंने समयसारजी, प्रवचनसारजी, अष्टपाहुडजी, कलशटीका, श्रीमद् राजचंद्रजी, अनुभवप्रकाश, चिद्विलास, बहिनश्रीके वचनामृत, गुरुदेवश्रीके वचनामृत, परमागमसार, स्वानुभूतिदर्शन इत्यादिक अनेक ग्रंथों पर समूहमें स्वाध्याय दिया। इन स्वाध्यायमें मार्गकी विधि, भेदज्ञान,

प्रत्यक्ष सत्पुरुष व सत्संगका महात्म्य, सत्पुरुषकी भक्ति, भावना, दर्शनमोहकी भयंकरता इत्यादि अनेक विषयों पर प्रकाश डाला। तद्उपरांत सातिशय ज्ञानयोग और वचनयोग द्वारा मुमुक्षुजीवोंको वर्तमान भूमिकासे आगे बढ़कर मोक्षमार्ग पर्यंत पहुँचनेके क्रमका, स्वयंकी मौलिक अनुभवपूर्ण शैलीमें सुव्यवस्थित प्रतिपादन करके सारे मुमुक्षु जगत पर अविस्मरणीय उपकार किया है। वर्तमानमें करीब ५५०० प्रवचनोंकी ऑडियो केसेट तथा सी.डी. एवं विडीयो केसेट तथा सी.डी. भावनगरमें उपलब्ध है। भारतमें व विदेशमें भी जिनमार्गकी प्रभावनाका कार्य उन्होंने किया है।

इसके अलावा स्वयंकी प्रायोगिक शैलीमें 'निर्भ्रांतदर्शनकी पगडंडी, प्रयोजन सिद्धि, तत्त्वानुशीलन-१-२-३, मुमुक्षुता आरोहण क्रम, सम्यक्दर्शनके सर्वोत्कृष्ट निवासभूत छः पदका अमृत पत्र, परिभ्रमणके प्रत्याख्यान, आत्मयोग' इत्यादि ग्रंथोकी रचना की तथापि 'अनुभव संजीवनी' कि जिसमें स्वयंके अंतर मंथनसे स्फुरित वचनामृतोंकी समर्थ रचनासे जन्म-मरणकी जटिल समस्याका हल करनेके लिए अति उपकारी मार्गदर्शन दिया है। तथापि उन्होंने 'ज्ञानामृत' 'द्रव्यदृष्टिप्रकाश' 'परमागमसार' 'भगवान-आत्मा,' 'विधि विज्ञान,' 'दूसरा कुछ न खोज,' 'धन्य आराधना,' 'अध्यात्म पराग,' 'जिण सासणं सव्वं' इत्यादि अनेक ग्रंथ संकलन और विवेचनके रूपमें मुमुक्षु जगतको दिये हैं।

पूर्वमें अध्यात्ममूर्ति पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीके पंच परमागम व अन्य परमागमों पर हुए विशिष्ट प्रवचनोंको ध्वनिमुद्रित केसेट परसे अक्षरसः पुस्तकारूढ़ प्रकाशित हो, वैसी उनकी विचारधारा और भावनाके फलस्वरूप 'प्रवचन रत्नाकर' भाग १ से ११ प्रकाशित करनेमें उनका बहुमूल्य मार्गदर्शन व योगदान रहा।

पूज्य गुरुदेवश्रीके ४५ वर्षकी प्रवचनवर्षाके सारांशरूप, मक्खनरूप १४३ प्रवचनोंका प्रकाशन भी उन्हींके निर्देशनसे 'प्रवचन नवनीत' भाग-१,२,३,४ प्रकाशीत हुए।

**श्रुत भक्तिः-**

महान दिगम्बर आचार्यों रचित अनेक प्राचीन परमागम जो उपलब्ध नहीं है, इसकी खोज हेतु श्री कुंदकुंद कहान तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट के अंतर्गत उन्होंने तामिलनाडु और कर्णाटकमें शास्त्रोंकी खोज की।

**प्राचीन ताड़पत्रीका निरीक्षण**
**(मुड़बिद्री-इ.स.१९९७)**

जर्मन युनिवर्सिटीके साथ इन प्राचीन शास्त्रोंकी खोज हेतु प्रयास किया एवं इग्लेंड, फ्रांस, जर्मनी, इत्यादिकी प्रसिद्ध लायब्रेरीयोंकी मुलाकात भी उन्होंने ली। भारतमें रही अन्य संस्थाओंके साथ मिलकर भी उन्होंने प्राचीन शास्त्र खोजका कार्य किया। तथापि उनकी भावना अनुसार यह कार्य श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट द्वारा आज भी चालू है।

श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, द्वारा हिंदी और गुजरातीमें प्रकाशित हो रही मासिक पत्रिका 'स्वानुभूतिप्रकाश' को उन्होंने अपूर्व मार्गदर्शन दिया। इस पत्रिकाके द्वारा जन-जन तक अध्यात्म तत्त्व पहुँचे ऐसी भावना पूर्वक इसका निःशुल्क वितरण भी उन्हींके

अनुग्रहसे हो रहा है।

**महा प्रयाण:-**

दि. २१-३-१९९९, चैत्र सुदी चौथ रविवारके दिन नित्यक्रम मुताबिक शामका सत्संग पूरा हुआ। किसीको मालूम न था कि आजकी रात कितनी क्रूर होगी। रात्रीको १:३० बजे हृदयमें दर्द शुरू हुआ। वेदना बढ़ती ही गई फिर भी परिवारवाले सामने थे, उन्हें अंदाज नहीं आने दिया। स्वयं अपने पुरुषार्थमें लगे रहे। उनके छोटे लड़के पंकजभाईसे पूज्य बहिनश्री व पूज्य गुरुदेवश्रीके बारेमें बातें करने लगे। भीतरमें आत्मस्वरूपके प्रति पुरुषार्थका जोर बढ़ता चला, बाहरमें उपकारी श्री गुरुके स्मरण करते गये तथा व्यक्त करते गये। अशाता जैसे गौण हो गई और आत्मिक पुरुषार्थने बल पकड़ा। डॉकटरोंकी सूचना अनुसार उन्हें अस्पताल ले गये। अस्पताल पहुँचने पर परिस्थिति और भी बिगड़ी, तब अंतरमें खयाल आ गया था कि अब इस द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव छोड़नेकी घड़ी आ पहुँची है। तब इतनी तीव्र वेदना होने पर भी खुद ध्यानमें पद्मासनमें बैठ गये। नमस्कार हो! ऐसे प्रचंड पुरुषार्थीको! आजीवन की हुई अखण्ड आत्मसाधना अंतिम क्षणोंमें आविर्भूत हुई। असाता वेदनीको गौण करके इससे उपेक्षित होकर उपयोग अंतर्मुख हुआ। सामान्य ज्ञानवेदनके आविर्भाव पूर्वक प्रदेश-प्रदेशसे स्वसंवेदनका रसास्वादन हुआ। पुरुषार्थने स्वरूपका बहुत जोरसे अवलंबन लिया, उपयोग सर्वसे भिन्न होकर स्वरूपमें ही लग गया। अनन्त कर्मोंकी निर्जरा हुई। बाहरमें डाक्टर अपना काम करते गये, मुमुक्षु असहाय बनकर अपने प्राणसे भी प्यारे श्रीगुरुको देखते रहे! अंततः चैत्र सुदि ५ दिः २२-३-१९९९, प्रातः ४:१५का समय है, उन्होंने मृत्यु महोत्सव मनाकर अपना एक भव कम किया और अपने पूर्णताके ध्येयके समीप पहुँचे। मुमुक्षुओंके लिए नहीं चाहने पर भी यह भयानक परिस्थिति सामने आ गई और पंचमकालने मुमुक्षुओंके सर्वस्वको लूट लिया। भीतरमें देह और आत्माकी भिन्नताका अनुभव और बाहरमें भी देह और आत्माकी भिन्नतारूप वास्तविकता खड़ी हो गई। सब मुमुक्षु अपने-अपने प्राणकी आहुति देने तैयार थे कि शायद इसीके बदलेमें श्री गुरु इस धरा पर शाश्वत रहे। लेकिन....

मुमुक्षुओंके जीवन आधार, मुमुक्षुओंको निःसहाय, अनाथ छोड़कर चले गये। क्या कुदरतको यह स्थिति मंजूर नहीं है कि, ऐसे दिव्यपुरुष शाश्वत इस धरा पर बिराजमान रहें? क्या कुदरत इतनी निष्ठुर भी बन सकती है? क्या कालको ज़रा सी भी दया नहीं आयी और मुमुक्षुके प्यारे परमेश्वरको छीन लिया? ऐसे-ऐसे अनेक प्रश्नों व असमाधानके बीच सारे मुमुक्षुवृंदकी आँखोंसे अविरत अश्रुधारा बहती रही। इस विराट व्यक्तित्वका वियोग मुमुक्षुओंके लिए एक वज्रपात बन गया। मुमुक्षुओं अवाचक नेत्रोंसे स्वयंके श्रीगुरुकी असहनीय विदाईको देखते रहे। दूर-दूर तक फैली हुई अमाप क्षितिजोंमे स्वयंकी आभा फैलाते हुए इस विश्वविभूतिका महा प्रयाण हुआ।

**-उपकृत मुमुक्षुवृंद**

**('अनुभव संजीवनी'में से साभार उद्धृत)**

## आचार्यशिरोमणि भगवान श्री कुंदकुंदआचार्यदेव के आचार्यपदवीदिन मागशर वदि अष्टमी (२३-१२-२४) के मंगल अवसर पर उनके चरणोंमें कोटी कोटी वंदन !!

''मंगलम भगवान वीरो, मंगलम गौतमोगणी
मंगलम कुंदकुंदार्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम''

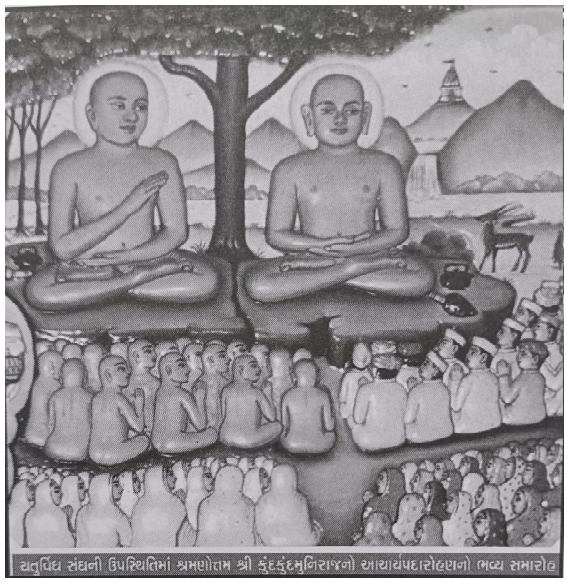


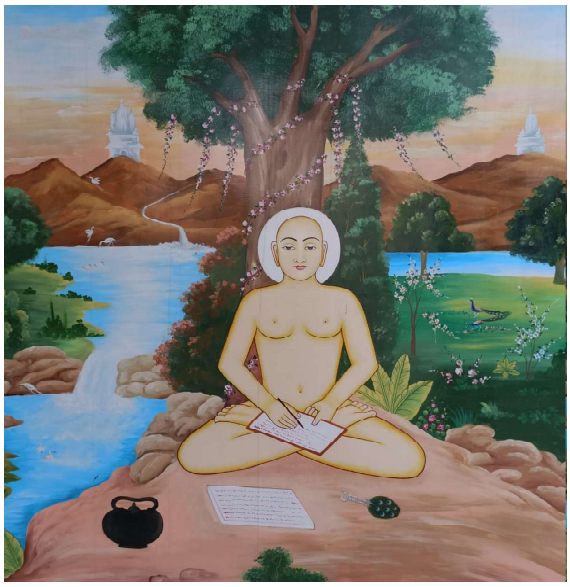

हे कुन्दकुन्द आदि आचार्यों! आपके वचन भी स्वरूपानुसंधानमें इस पामरको परम उपकार-भूत हुए हैं। इसके लिये मैं आपको अतिशय भक्तिसे नमस्कार करता हूँ।

– श्रीमद् राजचंद्र

(आभ्यंतर परिणाम अवलोकन-संस्मरणपोथी २, पृष्ठ ४५)

*REGISTERED NO. : BVHO - 253 / 2024-2026*
*RENEWED UPTO : 31/12/2026*
*R.N.I. NO. : 70640/97*
**Title Code : GUJHIN00241**
*Published : 10th of Every month at BHAV.*
*Posted at 10th of Every month at BHAV. RMS*
*Total Page : 20*

# 'सत्पुरुषों का योगबल जगत का कल्याण करे'

## श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर
**भावनगर**

स्वत्वाधिकारी श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री राजेन्द्र जैन द्वारा अजय ऑफसेट, १२-सी, बंसीधर मिल कम्पाउन्ड, बारडोलपुरा, अहमदाबाद-३८० ००४ से मुद्रित एवम् ५८० जूनी माणिकवाडी, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी मार्ग, भावनगर-३६४ ००१ से प्रकाशित
सम्पादक : श्री राजेन्द्र जैन -09825155066

Printed Edition : **3690**
Visit us at : http://www.satshrut.org

If undelivered please return to ...
**Shri Shashiprabhu Sadhana Smruti Mandir**
1942/B, Shashiprabhu Marg, Rupani,
Bhavnagar - 364 001

mayur process 9374825041